संदेश प्रसारित किए उन्हें सुनकर मन श्रद्धा से भर उठता था।

मैं याद करता हूं तो एक्टर चाचा की बातें ही पहले पहल याद आती हैं। ये और बात है कि मेरी रुचि भी साहित्य और फिल्मों में लगातार बढ़ी है। अनेक जानकारियां जुड़ती गईं और मैं रेडियो के माध्यम से फिल्मों के बारे में जानता गया। यानी फिल्मों के तमाम पहलू जो कार्यक्रम से जेहन में पहुंचे- जैसे एस कुमार्स का फिल्मी मुकदमा। आज जो अदालत वाले कार्यक्रम टीवी पर चल रहे हैं, उनका फार्मेट विविध भारती की ही देन है। फिल्मी सितारों से मुलाकात का हिट कार्यक्रम सेल्युलाइड के सितारे, संगीत की हस्तियों का प्रोग्राम सरगम के सितारे, फिल्मी गानों में शास्त्रीय रागों को खोजने वाला कार्यक्रम संगीत सरिता, और सूचना और मनोरंजन का मिश्रित कार्यक्रम पिटारा। ये सभी कार्यक्रम उस जमाने से आज के जमाने तक यादों में बसे हैं। और इसलिए वे तमाम फिल्में जिनके गाने हैं, और जिन्हें सुनकर आकाशवाणी पर फिल्में देखी गईं, अब जीवन के साथ हैं।

मैं आकाशवाणी की नौकरी में 1976 में अपनी कलात्मक अभिरुचि के चलते आया और फिल्मी गानों के आकर्षण की वजह से भी। हालांकि तब मेरी जेब में नौकरी के कई अच्छे आफर थे, लेकिन आकाशवाणी में आकर मालूम हुआ कि फिल्मी दुनिया से इसका कितना गहरा नाता हो। चाहे मीडियम वेव की बात हो, या शार्ट वेव की या फिर अब एफ एम के फिल्मी गानों के प्रसारण की, रेडियो का वह पहला अनिवार्य तत्व है और खासकर मनोरंजन की दृष्टि से। यही कारण था कि विविध भारती सेवा को आरंभ करने के समय गिरिजाकुमार माथुर, पं.नरेन्द्र शर्मा, गोपाल दास और केशव पंडित जैसे दिग्गज प्रसारकों ने यह परिकल्पना की और परिणाम हुआ कि रेडियो सीलोन को लोग भूलते गए। आज आकाशवाणी के खजाने में फिल्मी हस्तियों के अनेक इंटरव्यूज़ हैं और रेडियो आटोबायोग्राफी, जिनमें नौशाद, ओ पी नैयर, खय्याम, कल्याणजी आनंद जी. माला सिन्हा, वहीदा रहमान, महेन्द्र कपूर जैसे सितारे हैं। इन रिकार्डिंग्स को आज भी जब सुनाया जाता है, तो पुरानी यादें ताजा हो जाती है। और लोग टीवी या टीवी पर डीवीडी चलाकर फिल्में देखते हैं। विविध भारती का नेटवर्क अब बहुत बड़ा है। सौ वाट के सौ से अधिक ट्रांसमीटर देश में लगे हैं। और वहां से विविध भारती सेवा ही चलती है। इस पहुंच में अब सभी प्रमुख जिले और सरहद के इलाके शामिल हैं। मीडियम वेव सेवा, एफ एम पर देश भर में उपलब्ध है और मोबाइल पर एक बड़ा वर्ग इन्हें सुन रहा है, जो रेडियो से पहले दूर था। सो इस तरह रेडियो ने फिल्मों को जीवनदान भी बहुत हद तक बख्शा है।

अब फिल्म प्रोड्यूसर्स रेडियो पर फिल्मों के प्रचार-प्रसार के लिए पार्टनरशिप करते हैं और निःशुल्क प्रमोशन सामग्री उपलब्ध कराते हैं। पहले रेडियो, प्रोड्यूसर्स के पीछे भागता था, अब प्रोड्यूसर्स सितारों को स्टूडियो में लेकर पहुंचते हैं। अब अधिकांश एफ एम रेडियो डीटीएच और इंटरनेट पर उपलब्ध हैं और उनकी पहुंच विश्वव्यापी हो गई है। रेडियो के कार्यक्रम पड़ोसी देशों जैसे पाकिस्तान, श्रीलंका, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान से लेकर मिडिल ईस्ट में मनोयोग से सुने जाते हैं। प्रवासी भारतीयों के अलावा एक बड़ा फिल्म बिजनेस आकार ले चुका है जिसमें आनलाइन खरीद में गानों के अलावा फिल्मों का व्यापार चलता है। रेडियो केंद्रों को भी विज्ञापन में खासी कमाई होती है और एफ एम केंद्र विशेषकर प्राइवेट चैनल की कमाई का जरिया फिल्मी गाने ही हैं। अब एफ एम केंद्रों से सितारों से बातें होती हैं, फोन इन फरमाइशी कार्यक्रम होते हैं और काउंट डाउन के अलावा हिट सुपरहिट, फेवरेट फाइव जैसे प्रोग्राम हैं, साथ ही एस एम एस के बहाने वीबीएस के तराने जैसे चर्चित कार्यक्रम जो फिल्मों को मजबूत आधार देते हैं।

कह सकते हैं अगर रेडियो का साथ न होता, तो सिनेमा के सौ सालों का इतिहास इतना सुनहरा शायद ही होता। पाठकों को ये जिज्ञासा अवश्य होगी कि फिल्मों, फिल्मी गानों ने फिल्मों के विकास में हमसफर नहीं बल्कि मार्गदर्शक की भूमिका कैसे निभाई। इसमें दो बातें प्रमुख हैं- पहली यह कि फिल्मी गानों में दुख और सुख की गहरी अभिव्यक्ति थी, जिसका संबंध आम आदमी के अनुभव और सपनों से था। फिल्मों में उसके परिवार, समाज और देश का रूपायन था। उसकी आकांक्षाओं का आईना भी फिल्में थीं। गानों में करुणा, ऐसा आधारतत्व था जो कंपोजिशन में खासतौर पर रखा जाता था, ताकि वह आम आदमी के भावजगत को घेर ले।

इसके अलावा उसमें मार्मिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक संदेश होते थे। दूसरी बात थी फिल्मी सितारों से जीवंत या रिकार्डेड बातचीत का प्रसारण, जो फिल्मी दर्शक पैदा करने और संख्या बढ़ाने का परोक्ष काम करता था। इस तरह की बातचीत में संघर्ष की कहानी, आत्मीय संस्मरण और देशप्रेम की बातें होती थीं, ये प्रसारण दरअसल एक तरफ दर्शकों को आकर्षित करते थे, तो दूसरी ओर बालीवुड की ग्लैमरस दुनिया का हिस्सा होने का स्वप्न बुनते थे। दोनों ही फिल्मी प्रसारण अंततः फिल्मों के प्रति जिज्ञासा को बढ़ाकर टिकट खिड़की पर पैसा वसूल कर लेते थे।

कहना न होगा कि यह कहानी जितनी सरल, आकर्षक और मनोरंजक लगती है, उतनी है नहीं। अंतर्तहों में वास्तव में फिल्मों की मार्केटिंग चल रही होती थी और वह भी सामाजिक, सांस्कृतिक अर्थों, आशयों पर आधारित। इसलिए वह दोनों काम एक साथ करता था, यानि ऊपर से सामाजिक सुधार और भीतर से व्यापार। और अब तो खुल्लमखुल्ला व्यापार पहले है, साथ में सुधार, जागरण, हो जाए तो ठीक, अन्यथा- नाट फिकर, फिल्मी सेठ। ■